इकाई 8 वर्ग एवं वर्ग संघर्ष

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 वर्ग संरचना

- 8.2.1 वर्ग निर्धारण के प्रमुख आधार
- 8.2.2 इतिहास में समाजों का वर्गीकरण एवं वर्गों का उदय
- 8.2.3 पूँजीवाद के अन्तर्गत वर्ग संघर्ष की तीव्रता
- 8.2.4 वर्ग एवं वर्ग संघर्ष

8.3 वर्ग संघर्ष एवं क्रांति

- 8.3.1 वर्ग संघर्ष में सर्वहारा
- 8.3.2 वर्ग संघर्ष के विचार का संक्षिप्त इतिहास
- 8.3.3 सर्वहारा वर्ग की क्रांति

8.4 मार्क्स की 'अलगाव' की अवधारणा

- 8.4.1 अलगाव की प्रक्रिया
- 8.4.2 अलगाव दूर करना
- 8.4.3 अलगाव की अवधारणा: विश्लेषण का आधार

8.5 सारांश

8.6 शब्दावली

8.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपके द्वारा संभव होगा

- वर्ग की अवधारणा की व्याख्या करना
- वर्ग सरंचना हेतु विभिन्न आधारों को वर्णित करना
- वर्ग संघर्ष अथवा उत्पादन के तरीकों में परिवर्तन के कारण समाज के इतिहास की विभिन्न अवस्थाओं को समझना
- सामाजिक क्रांति क्या है तथा इतिहास में यह घटित कैसे होगी इसकी व्याख्या करना, तथा
- मार्क्स की "अलगाव" की अवधारणा को समझना।

8.1 प्रस्तावना

आपने इससे पूर्ववर्ती दो इकाइयों (6 और 7) में, समाज और ऐतिहासिक विकास पर मार्क्स के विचारों को पढ़ा है। इस इकाई में हमने मार्क्स द्वारा प्रयुक्त **वर्ग** की अवधारणा पर ध्यान केन्द्रित किया है। हमने यहां वर्ग को परिभाषित किया है और इसके साथ-साथ यह बताया है कि किन-किन स्थितियों में, किन आधारों पर किसी जनसमूह को वर्ग कहा जाता है। यहाँ इस पर

भी चर्चा की जाएगी कि विभिन्न वर्गों के मध्य संघर्ष क्यों और कैसे होता है। यह समझने की कोशिश की जाएगी कि वर्ग संघर्षों का समाज के ऐतिहासिक विकास पर क्या प्रभाव होता है।

इस इकाई के पहले भाग (8.2) में वर्ग संरचना की चर्चा की गई है, और समाज के इतिहास में **वर्ग संघर्ष** और उनके आधार पर किये गये समाज के वर्गीकरण का विवरण दिया गया है। इसके बाद हमने भाग 8.2 में पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत वर्ग संघर्ष किस प्रकार बढ़ता जाता है, इसकी विवेचना की है। अन्ततः हमने वर्ग तथा वर्ग संघर्ष, वर्ग संघर्ष एवं **क्रांति** की चर्चा के उपराँत मार्क्स की अलगाव की अवधारणा पर भाग 8.3 में आपका ध्यान केन्द्रित किया है।

8.2 वर्ग संरचना

अंग्रेज़ी की शब्द 'क्लास' (class) अर्थात् बर्ग का उद्भव लैटिन शब्द 'क्लासिस' (classis) से हुआ है। 'क्लासिस' शब्द का प्रयोग व्यक्तियों के सशस्त्र समूह के लिये किया जाता था। प्रसिद्ध रोमन राजा, सर्वियस टुलियस (678-534 ईसा पूर्व) के शासन में रोमन समाज सम्पत्ति के आधार पर पाँच वर्गों में विभक्त था। आगे चलकर वर्ग शब्द का प्रयोग मानव समाज के वृहत् समूहों के लिए किया जाने लगा।

मार्क्स के अनुसार पूँजीवादी समाज की एक बेजोड़ विशेषता वर्ग है। यही कारण था कि मार्क्स ने पूंजीवाद समाज के अलावा किसी अन्य तरह के समाज में वर्ग संरचना तथा वर्ग संबंधों का अध्ययन नहीं किया।

वस्तुतः समाजशास्त्र में मार्क्स के योगदान को वर्ग संघर्ष का समाजशास्त्र कहा जा सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि मार्क्सवादी चिन्तन एवं दर्शन के किसी भी अध्ययन के लिए हमें वर्ग की मार्क्सवादी धारणा को समझना अत्यंत आवश्यक है। मार्क्स ने अपनी संपूर्ण कृतियों में सामाजिक वर्ग की अवधारणा प्रयुक्त की है लेकिन इसकी व्याख्या पूर्ण रूप से कहीं नहीं की है। मार्क्स ने वर्ग संरचना की जो भी महत्वपूर्ण एवं विशद व्याख्या की है वह उसकी प्रसिद्ध कृति, *कैपिटल* (1894) के तीसरे भाग में है। 'सामाजिक वर्ग' के शीर्षक के अन्तर्गत मार्क्स ने आय के तीन स्रोतों से संबंधित तीन विभिन्न वर्गों को अलग-अलग किया तथा परिभाषित किया है। ये वर्ग हैं (अ) साधारण श्रमशक्ति पर निर्भर रहने वाले वे श्रमिक जिनकी आजीविका का मुख्य स्रोत श्रम है, (ब) पूंजीपति जिनकी आय का मुख्य स्रोत अतिरिक्त मूल्य अथवा उत्पादन से होने वाला लाभ है, तथा (स) भूमिपति जिनकी आय का मुख्य स्रोत भूमि का किराया है। इस प्रकार आधुनिक पूंजीवादी समाज की वर्ग संरचना में तीन वर्ग मुख्य हैं, वेतनभोगी श्रमिक अथवा कामगार, पूंजीपति तथा भूमिपति।

मौटे तौर पर समाज को दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। पहला पूंजीपति जिसे **'बुर्जुआ** वर्ग' कहा जाता है, इनके पास भूमि अथवा पूंजी, फ़ैक्टरी जैसे उत्पादन के साधनों का स्वामित्व होता है। दूसरा **सर्वहारा** वर्ग, जिसके पास अपनी आजीविका के लिये श्रम के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। मार्क्स ने सामाजिक वर्ग की सुनिश्चित परिभाषा देने का प्रयास किया है। उसके अनुसार किसी भी सामाजिक वर्ग का उत्पादन की प्रक्रिया में एक निश्चित स्थान होता है।

सोचिए और करिए 1

क्या भारतीय समाज को, मार्क्सवादी वर्ग की अवधारणा के संदर्भ में, वर्गों में बांटा जा सकता है? यदि हां, तो इन वर्गों का वर्णन कीजिये। यदि नहीं, तो बताइये भारतीय समाज को इस तरह क्यों वर्गीकृत नहीं किया जा सकता।

8.2.1 वर्ग निर्धारण के प्रमुख आधार

वर्ग और वर्ग संरचना की विशद् विवेचना से पूर्व हमें यह जान लेना चाहिये कि वर्ग कैसे बनते हैं तथा इनके निर्धारण के प्रमुख आधार क्या हैं। सभी मानव समूह वर्ग नहीं कहे जा सकते हैं। इसलिये आइये हम सब इस बात की चर्चा करें कि मार्क्सवादी संदर्भ में किन मानवीय समूहों को वर्ग कहा जा सकता है और किस समूह को वर्ग नहीं कहा जा सकता। किसी भी सामाजिक वर्ग के निर्धारण में दो प्रमुख आधार होते हैं - (i) वस्तुपरक आधार (ii) स्वचेतना परक आधार। वर्ग को समझने के लिये आइये अब हम इन आधारों की व्याख्या करें।

(i) वस्तुपरक (objective) आधार: उत्पादन के साधनों के साथ जब व्यक्तियों के समान संबंध होते हैं तो ऐसे समूह को वर्ग कहा जाता है। इसे समझने के लिये आइये हम एक उदाहरण लें, जैसे कि कृषि व्यवस्था में सभी खेतिहर मज़दूरों के भूमि तथा भूमिपतियों से एक जैसे संबंध होते हैं। उसी तरह से भूमिपतियों के भूमि तथा खेतिहर मज़दूरों से एक समान संबंध होते हैं। इस प्रकार इस व्यवस्था में दो वर्ग हैं, एक ओर श्रमिक वर्ग और दूसरी ओर भूमिपति वर्ग। लेकिन मार्क्सवादी संदर्भ में वर्ग निर्धारण के लिए ये संबंध पर्याप्त नहीं हैं। इस संदर्भ में मार्क्स का एक कथन बहुत प्रसिद्ध है कि वर्ग अपने आप में वर्ग होना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु उसे एक सचेत वर्ग होना चाहिए। इससे क्या अभिप्राय है? मार्क्स के अनुसार किसी सामाजिक वर्ग के वस्तुपरक आधार ही उसके अपने आप में वर्ग होने का निर्धारण करते हैं। वर्ग का अपने आप में वर्ग होने को किसी भी सामाजिक वर्ग का वस्तुपरक आधार माना जाता है। परन्तु मार्क्स ने वर्ग की परिभाषा करते समय केवल वस्तुपरक आधारों को ही वर्ग का पूर्ण आधार नहीं माना अपितु उसने वर्ग के दूसरे प्रमुख आधार अर्थात् स्वचेतनापरक आधार को भी समान रूप से महत्व दिया।

(ii) स्वचेतनापरक (Subjective) आधार: किसी भी समाज में अनेक समूह होते हैं, यदि इन समूहों को हम पहले आधार पर ही वर्ग माने लें तो ऐसे वर्ग वर्ग न होकर केवल संवर्ग (केटेगरी) होंगे। अत: वर्ग निर्धारण में स्वचेतनापरक आधार अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इस प्रकार किसी भी वर्ग में सदस्यों के उत्पादन साधनों से न केवल एक से संबंध होते हैं, अपितु उनमें इस बात की जागरूकता या **वर्ग चेतना** भी पाई जाती है कि वे एक ही वर्ग के सदस्य हैं।

वर्ग के बारे में यह एक सी चेतना, कि वे एक ही वर्ग के सदस्य हैं, किसी भी वर्ग के सदस्यों को सामाजिक क्रिया हेतु संगठित करने का आधार बन जाती है। अपने **वर्ग हित** के लिये संगठित प्रयास करने की यह वर्ग चेतना मार्क्स के शब्दों में सही वर्ग चेतना है। इसी को मार्क्स ने सचेत वर्ग (class for itself) माना है।

इस प्रकार किसी भी समाज में इन दो आधारों के द्वारा वर्ग और वर्ग संरचना निर्धारित होती है। अभी तक पढ़ी इस इकाई की पाठ्य सामग्री को आत्मसात कर पाने हेतु बोध प्रश्न 1 पूरा करें।

बोध प्रश्न 1

i) सामाजिक वर्ग को दो पंक्तियों में परिभाषित कीजिये।

.....

.....

ii) वर्ग निर्धारण के कौन से दो आधार हैं? तीन पंक्तियों में बताइए।

.....

.....

.....

8.2.2 इतिहास में समाजों का वर्गीकरण एवं वर्गों का उदय

मार्क्स ने मानव इतिहास को आर्थिक अवस्थाओं अथवा **उत्पादन प्रणाली** के आधार पर विभिन्न अवस्थाओं में बाँटा। इन्हीं आधारों पर उसने एशियाटिक, प्राचीन, सामन्तवादी तथा पूंजीवादी उत्पादन के चार प्रमुख तरीक़े बताये। मार्क्स के अनुसार सामाजिक विकास की उत्कृष्ट अवस्था साम्यवाद होगी। आइये हम मानव इतिहास की इन विभिन्न अवस्थाओं अथवा समाज की इन विभिन्न ऐतिहासिक अवस्थाओं का अध्ययन करें। इन्हें आदिम-साम्यवादी, दास अवस्था, सामन्तवादी अवस्था, पूंजीवादी अवस्था तथा साम्यवादी अवस्था कहा गया है। इस उपभाग में हमने, वर्ग के संदर्भ में, पहली तीन अवस्थाओं की चर्चा की है।

(i) **आदिम साम्यवादी अवस्था** मनुष्य के समाज के इतिहास में सबसे पहली अवस्था थी और मनुष्य के संगठन का सबसे सरलतम एवं निम्नतम स्वरूप था। यह अवस्था हज़ारों वर्षों तक चलती रही। मनुष्य काठ के डण्डों तथा पत्थरों जैसे आदिम तरीक़ों को अपनाकर शिकार करता था अथवा जंगली भोजन एकत्रित करके जीवनयापन करता था। समय के साथ-साथ धीरे-धीरे मनुष्य ने आदिम औज़ारों को सुधारा और उसने आग जलाना सीखा, कृषि एवं पशुपालन करना सीखा। इस अवस्था में उत्पादन की तकनीक अथवा जानकारी बहुत निम्न स्तरीय थी अर्थात् दूसरे शब्दों में उत्पादन की शक्तियां निम्न स्तरीय थीं। **उत्पादन के संबंध** उत्पादन के साधनों के संयुक्त स्वामित्व पर आधारित थे। अत: ये संबंध परस्पर सहायता एवं सहयोग पर निर्भर थे। इन संबंधों की प्रकृति परस्पर सहयोग की इसलिये भी थी, कि उस समय प्रकृति के प्रकोपों और भीषण शक्तियों से मनुष्य सामूहिक रूप से मिलकर ही निपट सकता था। क्योंकि उसके औज़ार, उसकी तकनीकी जानकारी बहुत निम्न स्तरीय थी।

इस अवस्था में एक दूसरे का शोषण न होने के दो कारण थे। एक तो **उत्पादन के साधन** अर्थात् उपयोग में लाए जाने वाले औज़ार साधारण किस्म के होते थे, जैसे कि भाला, लाठी, धनुष एवं तीर, आदि। इसीलिए किसी व्यक्ति अथवा समूह का औज़ारों पर एकाधिकार नहीं होता था। दूसरा उत्पादन भी निम्न-स्तर का अथवा बहुत कम होता था। लोग केवल जीवन निर्वाह कर पाने में ही समर्थ थे। सभी के काम करने के बावजूद उत्पादन केवल इतना ही होता था कि सब का जीवन निर्वाह हो सके। अत: यह एक ऐसी अवस्था थी जिसमें कोई किसी का कोई मालिक अथवा सेवक नहीं था। सभी व्यक्ति एक समान थे।

धीरे-धीरे समय के साथ-साथ मनुष्य ने अपने औज़ारों और उत्पादन तकनीक को बेहतर बनाना शुरु किया तथा इसके साथ-साथ आवश्यकता से अतिरिक्त उत्पादन होने लगा। इस अतिरिक्त उत्पादन के कारण कुछ लोगों के पास निजी सम्पति संचित होने लगी और आदिम समानता का स्थान समाज में सामाजिक असमानता ने ले लिया। इस अवस्था में पहली बार दास तथा मालिकों के रूप में परस्पर विरोधी वर्ग अस्तित्व में आये। इससे हमको यह पता चलता है कि किस प्रकार उत्पादन की शक्तियों के विकास के फलस्वरूप आदिम साम्यवादी अवस्था का स्थान दास अवस्था ने ले लिया। यह कहा जा सकता है कि आदिम साम्यवादी अवस्था में वर्ग नहीं थे तथा वर्ग बनने के साथ-साथ दूसरी अवस्था आ गई जिसे दास अवस्था कहा गया।

(ii) **दास अवस्था** में आदिम औज़ारों को परिष्कृत किया गया। पत्थर और लकड़ी के औज़ारों का स्थान काँसे तथा लोहे के औज़ारों ने ले लिया। इसी अवस्था में वृहत्-स्तरीय कृषि, पशुपालन, खान उद्योग और हस्तकला जैसी विधाओं का विकास हुआ। उत्पादन की इस तकनीकी जानकारी अथवा उत्पादन की इन शक्तियों के विकास के कारण उत्पादन के संबंधों में परिवर्तन आये। ये संबंध इस बात पर आधारित थे कि मालिकों का गुलामों, उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं और उत्पादन के साधनों पर पूर्ण स्वामित्व था। मालिक गुलामों को उत्पादन का सिर्फ इतना ही हिस्सा देते थे, जिससे कि उनकी न्यूनतम आवश्यकतायें पूरी हो सकें और वे भूख से न मर जायें।

इस प्रकार मानव इतिहास में प्रथम बार मनुष्य का मनुष्य के द्वारा शोषण का इतिहास प्रारंभ हुआ और इसी के साथ वर्ग संघर्ष का इतिहास भी अस्तित्व में आया। समय के साथ-साथ उत्पादन की शक्तियों का विकास निरंतर जारी रहा, जिसके फलस्वरूप उत्पादन बढ़ने की प्रक्रिया में दास प्रथा एक बाधा प्रतीत होने लगी। उत्पादन की नई शक्ति उच्च उत्पादन के उद्देश्य से प्रेरित थी तथा इसके लिए उत्पादन के उपकरणों का और बेहतर होना भी जरुरी था। परन्तु गुलामों की इस नई प्रक्रिया में कोई रुचि नहीं थी, क्योंकि इस सबसे उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं होने वाला था। समय के साथ-साथ मालिक वर्ग और दास वर्ग में वर्ग संघर्ष चरम सीमा तक पहुंच गया, जिसके फलस्वरूप दास क्रांतिया हुई। पड़ौसी जनजातियों के आक्रमण के साथ-साथ इन क्रांतियों के फलस्वरूप दास प्रथा की जड़ें हिल गई और एक नई अवस्था का प्रादुर्भाव हुआ, जिसे मार्क्स ने सामंतवादी (देखिए कोष्ठक 8.1) अवस्था कहा। बिंदु iii) में सामंतवादी अवस्था की चर्चा की गई है।

कोष्ठक 8.1: सामंतवादी व्यवस्था

सामंतवाद शब्द को "फ़ीफ़" (fief) की संस्था से लिया गया है। फ़ीफ़ जागीर को कहते हैं, जो कि भूमि सम्पति का एक टुकड़ा होती थी। यूरोपीयन इतिहास के मध्य युग में शासकों ने इस प्रथा को शुरू किया था। इसके अंतर्गत शासक अपने अधीनस्थ समूहों से सैन्य सुविधाएं लेकर, इसके बदले में उन्हें भूमि देता था। यह संबंध सम्पत्ति के अथवा फ़ीफ़ या जागीर के हक़ के रूप में अभिव्यक्त होता था। इस संबंध को क़ानून की मान्यता मिली हुई थी। शासक अपने अधीनस्थों के लिये न्यायालय लगाते थे। जहां वे झगड़ों का निपटान करते थे तथा क़ानून एवं प्रथाओं का उल्लंघन करने वाले को दण्ड देते थे। यही न्यायालय एक प्रशासनिक निकाय भी था जो कि कर लगाता था तथा सैन्य बल का भी गठन करता था। भूमिपति कृषक वर्ग पर नियंत्रण रखते थे। बारहवीं शताब्दी तक भूमि के किरायेदार किसानों (खातेदार) तथा अन्य कृषकों पर भूमिपतियों का नियंत्रण अत्यधिक बढ़ गया था।

(iii) **सामंतवादी अवस्था** में उत्पादन की शक्तियों का विकास जारी रहा। मनुष्य ने इस अवस्था में मानव श्रम के अतिरिक्त, ऊर्जा अर्थात् अजैवकीय शक्ति के स्रोत प्रयोग में लाने शुरू कर दिए जिसमें जल तथा वायु प्रमुख थे। कारीगरी का विकास हुआ, नये औज़ार और मशीनों का आविष्कार हुआ और पुराने औज़ारों को परिष्कृत किया गया। इस अवस्था में निपुण कारीगरों ने उत्पादकता में महत्वपूर्ण वृद्धि की। उत्पादन की शक्तियों के विकास के कारण उत्पादन के सामंतवादी संबंधों की स्थापना हुई। ये सामंतवादी संबंध भूपतियों और भूमिहीन किसानों के मध्य स्थापित हुये। इन संबंधों में महत्वपूर्ण बात यह थी कि भूमिहीन कृषकों पर भूपति सामंतों का पूर्ण प्रभुत्व था और ये सामंत इन कृषकों का शोषण करते थे। तथापि दास प्रथा की तुलना में ये संबंध अधिक प्रगतिशील थे, क्योंकि इनके अंतर्गत दासों की तुलना में श्रमिकों की स्थिति बेहतर थी और श्रमिक कुछ हद तक अपने श्रम में रुचि लेने लगे थे। इसके साथ-साथ इस अवस्था में कृषक तथा कारीगर कुछ लघुस्तरीय उत्पादन के औज़ारों और कृषि की छोटी जोत के मालिक भी हो सकते थे।

समय के साथ-साथ नये आविष्कार हुये, जिससे उत्पादन की शक्ति में परिवर्तन आये, जनसंख्या में वृद्धि हुई, जिसके कारण उपभोग की वस्तुओं की मांग बढ़ी और उपनिवेशीकरण का युग प्रारंभ हुआ, जिसके कारण नये बाज़ार अस्तित्व में आये। नई प्रौद्योगिकी तथा आवश्यकताओं के कारण वृहत् स्तरीय उत्पादन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इस सब बातों ने असंगठित श्रमिकों को उत्पादन प्रक्रिया में एक स्थान पर लाकर खड़ा किया, जो कि फ़ैक्ट्री अथवा असंगठित उद्योग कहलाये। इसका परिणाम यह हुआ कि पहले से ही तीक्ष्ण हुए वर्ग संघर्षों ने भूमिपतियों के विरुद्ध कृषक क्रांति का रूप ले लिया। उत्पादन की नई व्यवस्था में मुक्त श्रमिक की आवश्यकता थी जबकि भूमिहीन कृषक का श्रम केवल जमीन से जुड़ा हुआ था। अत: उत्पादन

की नई शक्तियों ने उत्पादन के संबंधों को भी परिवर्तित किया, जिसके फलस्वरूप सामंतवादी उत्पादन के तरीक़े का पूंजीवादी उत्पादन के तरीक़े में परिवर्तन हुआ। अगले उपभाग (8.2.2) में हमने पूंजीवादी समाज में वर्ग संघर्ष पर चर्चा की है। परंतु अगले उपभाग को पढ़ने से पहले आइए बोध प्रश्न 2 पूरा करें।

बोध प्रश्न 2

i) मार्क्स द्वारा दी गई, समाज की पांच अवस्थाएं बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

(ii) निम्नलिखित कथनों में से प्रत्येक के सामने सही अथवा गलत पर निशान लगाइए।

अ) दास अवस्था के साथ वर्ग संघर्ष अथवा विरोध का इतिहास शुरू हुआ। सही/ग़लत

ब) आदिम साम्यवादी अवस्था में सम्पति का निजी स्वामित्व नहीं था। सही/ग़लत

8.2.3 पूंजीवाद के अंतर्गत वर्ग संघर्ष की तीव्रता

पूँजीवाद पर आधारित व्यवस्था में उत्पादन शक्तियों का प्रमुख लक्षण वृहत् स्तरीय उत्पादन है। इस व्यवस्था के अस्तित्व में आते ही हस्तकला क्षेत्रों तथा लघु कृषि का स्थान विशालकाय फ़ैक्ट्रियों और उद्योगों ने ले लिया। मार्क्स और एंजल्स (1848) ने *मैनिफ़ैस्टो ऑफ़ द कम्युनिस्ट पार्टी* में यह बतलाया है कि पूंजीवादी उत्पादन शक्तियों ने किस तरह नए आविष्कारों से बड़ी-बड़ी आबादियों का नक़्शा ही बदल दिया। पिछली दो शताब्दियों में पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन शक्तियों में इतना अधिक परिवर्तन आया जितना कि इससे पूर्व के सम्पूर्ण मानव इतिहास में नहीं आया था।

उत्पादन की शक्तियों की इस तीव्र प्रगति में पूंजीवादी उत्पादन के संबंधों का भी योगदान था। पूंजीवादी उत्पादन के संबंध उत्पादन के साधनों पर पूंजीपतियों के स्वामित्व पर आधारित थे। उत्पादक अथवा औद्योगिक श्रमिक कानूनी रूप से स्वतंत्र है अर्थात् है किसी ज़मीन अथवा किसी विशेष फ़ैक्ट्री से जुड़ा हुआ नहीं है। इस व्यवस्था में श्रमिक की स्वतंत्रता इस अर्थ में है कि वह अपनी मनमर्ज़ी से किसी भी पूंजीपति के पास कार्य करने जा सकता है, परन्तु वह बुर्जुआ वर्ग से पूर्ण रूप से मुक्त नहीं है। उत्पादन के साधनों का स्वामित्व न होने के कारण उसे अपनी श्रम शक्ति बेचने के लिये बाध्य होना पड़ता है और उसे किसी न किसी पूंजीपति के पास कार्य करना पड़ता है। इस प्रकार वह इस शोषण के चक्र से नहीं बच सकता।

पहले की अपेक्षा स्वतंत्र औद्योगिक श्रमिक शोषण के कारण अपने वर्ग हितों के प्रति अधिक सचेत रहते हैं और अपने आपको कामगार आंदोलन के रूप में संगठित करते हैं। यह आंदोलन बुर्जुआ वर्ग के विरुद्ध संघर्ष को तेज़ करता है। इसमें सर्वप्रथम बेहतर वेतन और काम करने की दशाओं के लिये सौदेबाज़ी होती है। परन्तु अन्त में इसका उद्देश्य पूंजीवादी व्यवस्था का तख़्ता पलटना होता है। मार्क्स के अनुसार पूंजीवादी व्यवस्था असमानता, शोषण तथा वर्ग संघर्ष के सबसे उग्रवादी स्वरूप का प्रतीक है। ये कारण मिलकर समाजवादी क्रांति का मार्ग प्रशस्त करते हैं, जिसके फलस्वरूप एक नयी अवस्था का प्रादुर्भाव होता है, जिसे साम्यवाद कहा गया है।

कोष्ठक 8.2: साम्यवाद

"साम्यवाद" शब्द का उद्भव 1830 ईस्वी के मध्य में हुआ था। इस समय पैरिस में गुप्त क्रांतिकारी पार्टियों ने "साम्यवाद" शब्द को अपनाया था। कामगार वर्ग ने पूंजीवादी समाज में पूंजीपतियों के विरुद्ध यह राजनैतिक आंदोलन चलाया था। साम्यवादी समाज का अभिप्राय उस समाज से था जो कामगार वर्ग के संघर्ष के परिणामस्वरूप सामने आने वाला था।

उन्नीसवीं शताब्दी के पिछले भाग में कामगार वर्ग के आंदोलन की चर्चा में साम्यवाद और समाजवाद का एक ही अर्थ समझा जाने लगा। मार्क्स तथा एंजल्स ने भी अपने लेखों में प्राय: इन अवधारणाओं का इसी तरह प्रयोग किया। तीसरे अंतर्राष्ट्रीय साम्यवादी सम्मेलन, 1917 के समय से पूंजीवाद को उखाड़ फेंकने वाली क्रांति के रूप में साम्यवाद की अवधारणा का प्रयोग किया जाने लगा। लेकिन अब समाजवाद का अभिप्राय शांतिपूर्वक व वैधानिक गतिविधि द्वारा लाए गए दीर्घकालीन परिवर्तनों से समझा जाता है जबकि साम्यवाद का अर्थ हिंसात्मक क्रांति द्वारा लाए गए परिवर्तनों से है।

मार्क्स ने साम्यवाद को समाज का एक विशिष्ट रूप माना है। *इकॉनॉमिक एण्ड फ़िलॉसॉफ़िकल मैनुस्क्रिप्ट्स* (1844) में मार्क्स ने लिखा है कि साम्यवाद के अंतर्गत निजी सम्पत्ति, स्व का अलगाव (self–alienation) तथा मनुष्य का मनुष्य द्वारा शोषण पूर्ण रूप से समाप्त हो जाएगा।

8.2.4 वर्ग एवं वर्ग संघर्ष

अभी तक हमने यह अध्ययन किया है कि उत्पादन प्रणाली अथवा आर्थिक संरचना समाज की आधारशिला है। **अधोसंरचना** (infrastructure) में कोई भी परिवर्तन **अधिसंरचना** (superstructure) में मौलिक परिवर्तन लाता है (अधोसंरचना तथा अधिसंरचना के लिये इकाई 6 देखिए), जिसके परिणामस्वरूप समाज में परिवर्तन होते हैं। उत्पादन प्रणाली में परिवर्तन मूलत: उत्पादन शक्तियों और उत्पादन संबंधों में परिवर्तन है। आइए, हम वर्ग संघर्ष के संदर्भ में उत्पादन प्रणाली में परिवर्तनों पर चर्चा करें। आदिम साम्यवादी अवस्था में अतिरिक्त उत्पादन की संभावनायें नहीं थीं तथा उत्पादन के साधनों में निजी स्वामित्व भी नहीं था। इस कारण उस अवस्था में किसी प्रकार की असमानता अथवा शोषण भी नहीं दिखाई देता। उत्पादन के साधन मानव समुदाय की सामूहिक सम्पत्ति थे तथा कोई वर्ग संघर्ष नहीं थे। उत्पादन शक्तियों में विकास और सुधार के साथ-साथ उत्पादकता भी बढ़ी, जिसके फलस्वरूप उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व संभव हुआ और इन सभी कारणों से उत्पादन संबंधों में भी परिवर्तन हुआ। इस मोड़ पर आकर आदिम साम्यवादी अवस्था खत्म हो जाती है और एक नई अवस्था, दास प्रथा, प्रारंभ होती है। इसके साथ प्रारंभ होता है मानवीय इतिहास में असमानता, शोषण और वर्ग संघर्ष का एक लम्बा दौर।

दास प्रथा में मालिकों और गुलामों के मध्य वर्ग संघर्ष के कारण उत्पादन के तरीक़ों में परिवर्तन आया, जिसकी वजह से सामंतवादी अवस्था का प्रादुर्भाव हुआ। मार्क्स ने कहा कि आज तक के समाज का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। इसका अर्थ है कि समाज का सम्पूर्ण इतिहास वर्ग संघर्ष की विभिन्न अवस्थाओं और कालों का साक्षी रहा है। वर्ग संघर्ष का इतिहास दास प्रथा से प्रारंभ होकर सामंतवादी अवस्था में जारी रहता है। पहले, वर्ग संघर्ष दास तथा मालिक वर्गों के मध्य शुरू हुआ। सामंतवादी अवस्था में वर्ग संघर्ष भूपति सामंतों और भूमिहीन कृषि मज़दूरों के मध्य हुआ। उत्पादन प्रणाली में परिवर्तन तथा वर्ग संघर्ष के कारण समाज में इस सामंतवादी व्यवस्था का स्थान पूंजीवादी व्यवस्था ने ले लिया।

पूंजीवादी व्यवस्था में वर्ग संघर्ष चरमोत्कर्ष पर पहुंच जाता है, जिससे कि कामगार वर्ग का आंदोलन एक ठोस शक्ल लेकर क्रियान्वित होता है। पूंजीपतियों के वर्ग और औद्योगिक श्रमिकों के मध्य वर्ग संघर्ष के कारण पूंजीवादी व्यवस्था का स्थान समाजवाद ले लेता है। इस क्रांतिकारी

आमूल परिवर्तन को मार्क्स ने क्रांति कहा है। अगले भाग (8.3) में हमने क्रांति की अवधारणा पर विस्तार से चर्चा की है। अगला भाग पढ़ने से पहले सोचिए और करिए 2 पूरा करें।

सोचिए और करिए 2

क्या भारतीय इतिहास वर्ग संघर्ष के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करता है? यदि हां तो, कम से कम एक उदाहरण को विस्तार से बतलाइये। यदि नहीं तो, भारतीय इतिहास में वर्ग संघर्ष के न होने के कारण बताइये।

8.3 वर्ग संघर्ष एवं क्रांति

मार्क्स के अनुसार पूंजीवादी व्यवस्था में वर्ग संघर्ष के कारण क्रांति होगी, जिसके फलस्वरूप समाजवाद आयेगा। यहां यह प्रश्न उठता है कि पूंजीवादी समाज में वर्ग संघर्ष का कारण क्या है? वस्तुत: यहां उत्पादन की शक्तियों और संबंधों में परस्पर विरोध देखने में आता है। बुर्जुआ वर्ग निरंतर उत्पादन के सशक्त साधन सृजित करता है। परन्तु उत्पादन की शक्तियों में इन परिवर्तनों से उत्पादन संबंध अप्रभावित रह जाते हैं। अर्थात् उत्पादन के साधनों में स्वामित्व और आय की वितरण संरचना में उसी दर से परिवर्तन नहीं आते। पूंजीवादी उत्पादन के तरीके वृहत्-स्तरीय उत्पादन करने में सक्षम होते हैं। इस वृहत्-स्तरीय उत्पादन और आर्थिक समृद्धि में अत्यधिक वृद्धि के बावजूद पूंजीवादी व्यवस्था में अधिकांश जनसंख्या निर्धनता और मुसीबतों का शिकार रहती है। दूसरी ओर कुछ परिवारों के पास कल्पना से परे इतनी अधिक सम्पदा का संचय होता है कि ये विषमतायें स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगती हैं। निर्धनता और मुसीबतों के विशाल समुद्र में ऐसा लगता है, जैसे समृद्धि के छोटे-छोटे द्वीप उठ खड़े हुये हों। इस भीषण विषमता का उत्तरदायित्व असमान तथा शोषक उत्पादक संबंधों पर होता है, जो कि उत्पादन और उत्पादन से उत्पन्न समृद्धि का असमान तरीकों से वितरण करते हैं। मार्क्स के अनुसार इस विरोध के कारण एक क्रांतिकारी संकट उत्पन्न होता है। मार्क्स की भविष्यवाणी थी कि इस स्थिति में सर्वहारा वर्ग जो कि आबादी का एक बड़ा हिस्सा होता है, वह एक संघर्षकारी वर्ग बन जायेगा और एक ऐसी सामाजिक शक्ति के रूप में उभरेगा जो कि इन उत्पादन संबंधों को परिवर्तित करना चाहेगा।

8.3.1 वर्ग संघर्ष में सर्वहारा

मार्क्स ने सर्वहारा को वर्ग संघर्ष में एक उभरते हुए वर्ग के रूप में माना है। उसने यह दावे से कहा है कि एक वर्ग का दूसरे वर्ग पर विजित होना समाज की प्रगति का आधार रहा है। मार्क्स के जीवन का उद्देश्य ही सर्वहारा वर्ग को प्रभावी बनाना था। एक तरह से वह वर्ग संघर्ष के अभियान का नायक बन गया था। पूंजीपति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए मार्क्स ने समाज व इतिहास को नियमित करने के तरीकों पर विशेष ज्ञान अर्जित किया। अपनी मुख्य कृति, *कैपीटल* (1861-1879) में मार्क्स ने वर्ग संघर्ष के वाद-विवादों पर ध्यान नहीं दिया है। यहां पर उसने इस वाद-विवाद को व्यर्थ माना है। तात्कालिक चर्चा में मार्क्स ने भावुकतावाद, मानवतावाद तथा आदर्शवाद आदि दार्शनिक विचारधाराओं से कोई लगाव नहीं दर्शाया है। उसकी मान्यता थी कि वर्ग संघर्ष हर स्तर पर होता है अत: उसने ऐसी राजनैतिक पार्टी के गठन की आवश्यकता पर ज़ोर दिया जो प्रभावी हो तथा विजित वर्ग बन सके।

8.3.2 वर्ग संघर्ष के विचार का संक्षिप्त इतिहास

यहां यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि वर्ग संघर्ष का विचार सबसे पहले मार्क्स ने नहीं दिया था। सेंट सिमों ने भी मानव इतिहास को सामाजिक वर्गों के मध्य हो रहे संघर्ष के रूप में देखा था। 1790 के दशक में एक फ्रांसीसी राजनैतिक आंदोलतकर्ता बाबेफ़ ने सर्वहारा वर्ग की

अधिनायकता के बारे में लिखा है। बाद में बाबेफ़ के शिष्य ब्लॉकी तथा एक जर्मन दर्ज़ी वाइटलिंग ने बाबेफ़ के विचारों को आगे विकसित किया। फ़्रांसीसी समाजवादियों ने औद्योगिक राज्यों में कामगारों की भावी प्रस्थिति तथा उनके महत्व की विवेचना की थी। वास्तव में, अट्ठारहवीं शताब्दी में बहुत से चिंतकों ने ऐसी धारणाएं विकसित की थीं। मार्क्स ने सभी के विचारों की बारीक़ी से जांच पड़ताल की तथा एक नया सामाजिक विश्लेषण प्रस्तुत किया। वर्ग संघर्ष पर मार्क्स का विश्लेषण साधारण मूल-सिद्धातों के विस्तृत विवरण पर आधारित है। मार्क्स के अनुसार सर्वहारा वर्ग सामाजिक संस्तरण में सबसे निम्न वर्ग है। इसके नीचे अन्य कोई वर्ग नहीं है। वस्तुत: सर्वहारा वर्ग के उद्धार में ही मानव जाति का उद्धार है। मार्क्स बुर्जुआ वर्ग द्वारा संघर्ष करने के अधिकार को भी मान्यता देता है। लेकिन सर्वहारा वर्ग के लिए यह संघर्ष जीतना उसके जीवित रहने के लिए अर्थात् अस्तित्व के लिए अनिवार्य है।

8.3.3 सर्वहारा वर्ग की क्रांति

मार्क्स के अनुसार यह परिवर्तन क्रांतिकारी परिवर्तन होगा और सर्वहारा वर्ग की यह क्रांति पिछली हुई सभी क्रांतियों से भिन्न होगी। विगत क्रांतियां अल्प संख्यक लोगों द्वारा अल्प संख्यक लोगों के लाभ के लिये की गई थीं, परन्तु सर्वहारा वर्ग की क्रांति बहुसंख्यक समुदाय द्वारा की जायेगी और इसका लाभ सभी को मिलेगा। इस प्रकार सर्वहारा क्रांति के फलस्वरूप पूंजीवादी समाज का तख़्ता पलट जायेगा और एक वर्गविहीन समाज की स्थापना होगी, जिसमें सम्पति का निजी स्वामित्व नहीं होगा और न ही किसी प्रकार की असमानता होगी अथवा शोषण होगा। सर्वहारा वर्ग का सामूहिक रूप से स्वामित्व होगा तथा उत्पादन समाज के सभी सदस्यों में समान रूप से वितरित होगा। इस अवस्था को सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व (dictatorship of proletariat) कहा गया। यह अवस्था कालांतर में राज्यविहिन समाज में परिणित हो जायेगी, जिसके अंतर्गत अंतत: साम्यवादी अवस्था स्थापित होगी। इसके साथ-साथ सभी प्रकार के सामाजिक वर्ग और वर्ग संघर्ष भी समाप्त हो जायेंगे। इस अवस्था में सर्वहारा वर्ग का अलगाव (alienation) भी समाप्त हो जाएगा। अलगाव की अवधारणा मार्क्सवाद की प्रमुख धारा समझी जाती है। बोध प्रश्न 3 के बाद अगले भाग (8.4) में अलगाव की अवधारणा के बारे में तथा मार्क्स के वर्ग-विश्लेषण में इसकी महत्ता के बारे में भी कुछ चर्चा की जाएगी।

बोध प्रश्न 3

i) साम्यवाद की प्रमुख विशेषताओं को तीन पंक्तियों में लिखिये।

.....

.....

.....

ii) निम्नलिखित कथनों के सामने सही अथवा गलत पर निशान लगाइए।

अ) सम्पत्ति का निजी स्वामित्व साम्यवाद में समाप्त नहीं होगा। सही/ग़लत

ब) साम्यवाद में राज्यविहीन, वर्गविहीन समाज होगा। सही/ग़लत

8.4 मार्क्स की अलगाव की अवधारणा

अलगाव (alienation) का शाब्दिक अर्थ है "अलग होना"। साहित्य में यह शब्द अक्सर प्रयुक्त हुआ है लेकिन मार्क्स ने इसे समाजशास्त्रीय अर्थ दिया है। मार्क्स का अलगाव की अवधारणा से अभिप्राय ऐसे समाज की संरचना से है जिसमें उत्पादन के साधनों से उत्पादक वंचित रहता है तथा जिसमें "निर्जीव श्रम" (पूंजी) का "जीवित श्रम" (श्रमिक) पर प्रभुत्व होता है। आइए हम जूते बनाने के कारखाने के एक मोची का उदाहरण लें। यह मोची जूते तो बनाता है लेकिन

उनका अपने लिए इस्तेमाल नहीं कर सकता। उसकी बनाई हुई रचना (जूता) एक ऐसी वस्तु बन जाती है जो उससे अलग हो जाती है। यह वस्तु एक ऐसा रूप ले लेती है जो उसके बनाने वाले से पृथक हो जाती है। वह अपनी काम करने तथा सजृन करने की अन्त:प्रेरणा को संतुष्ट करने के लिए जूते नहीं बनाता अपितु अपनी जीविका कमाने के लिए ऐसा करता है। कारीगर के लिए वस्तु का पृथक रूप धारण कर लेना और भी गहरा हो जाता है जब कारख़ाने में उत्पादन प्रक्रिया अलग-अलग हिस्सों में बांट दी जाती है तथा कारीगर के हिस्से में एक पूरे काम (जूता बनाना) का छोटा सा हिस्सा ही आता है। इस तरह वह जूता बनाने के किसी एक भाग पर काम करने की गतिविधि (जैसे सिलाई अथवा कटाई आदि) में लगा रहता है। उसका काम मशीन जैसा हो जाता है तथा वह सोच-समझ से काम करने की क्षमता को खो देता है। मार्क्स ने 'फ़टिशिज़्म ऑफ़ कमोडिटीज़ एण्ड मनी' शीर्षक के अंतर्गत *कैपीटल* (1861-1879) में इस अवधारणा की विस्तृत एवं व्यवस्थित व्याख्या दी है। परन्तु इस अवधारणा की नीतिशास्त्रीय बुनियाद 1844 में रखी गई। इस समय मार्क्स ने "राज्य" एवं "धन" की पूर्ण रूप से आलोचना की, इन्हें अस्वीकृत कर दिया तथा सम्पूर्ण समाज के उद्धार का "ऐतिहासिक मिशन" सर्वहारा वर्ग को सौंपा।

8.4.1 अलगाव की प्रक्रिया

मार्क्सवादी अर्थ में अलगाव एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से (अथवा जिस स्थिति में) एक व्यक्ति, एक समूह, एक संस्था, अथवा एक समाज निम्न के प्रति अलगावित (alienated) हो जाता है (अथवा अलगावित बना रहता है):

अ) अपने कामों के परिणामों अथवा उत्पादों के प्रति (तथा क्रियाओं के प्रति), और/या

ब) उस प्राकृतिक वातावरण के प्रति जिसमें वह रहता है, और/या

स) अन्य व्यक्तियों के प्रति, तथा इसके अतिरिक्त (अ) से (स) तक किसी एक अथवा सभी के प्रति

द) स्वयं के प्रति (स्वयं की ऐतिहासिक रूप से सृजित मानवीय संभावनाओं के प्रति)।

अलगाव सदैव आत्म-अलगाव होता है, अर्थात् अपने ही कामों द्वारा अपने से अलग हो जाना। गैजो पेत्रोविक (1983: 10) के कथनानुसार, "अलगाव के अनेक स्वरूपों में से आत्म-अलगाव एक स्वरूप मात्र नहीं है, अपितु अलगाव की यह आधारभूत संरचना तथा सार है। यह मात्र एक विवरणात्मक अवधारणा नहीं है, बल्कि विश्व में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के लिये इसमें एक आह्वान है, एक अपील भी है।"

8.4.2 अलगाव दूर करना

मार्क्स का उद्देश्य अलगाव की मात्र आलोचना करना नहीं था। उसका उद्देश्य एक आमूल क्रांति के लिये मार्ग प्रशस्त करना तथा एक ऐसे साम्यवाद की स्थापना करना था जिसे "व्यक्ति का अपनी स्वयं की ओर वापस आने की प्रक्रिया का पुनर्एकीकरण, या आत्म-अलगाव पर विजय" के रूप में समझा जाये। मार्क्स के अनुसार केवल निजी सम्पत्ति समाप्त करने से आर्थिक एवं सामाजिक जीवन का अलगाव दूर नहीं हो सकता है। निजी सम्पत्ति को राज्य सम्पत्ति में परिवर्तित करने से श्रमिक अथवा उत्पादक की स्थिति नहीं बदलती। पूंजीवादी उत्पादन में अलगाव के कुछ तत्वों की जड़ उत्पादन के साधनों की प्रकृति में तथा इससे संबंधित सामाजिक श्रम के विभाजन में होती है। इसी वजह से उत्पादन के प्रबंधन में परिवर्तन मात्र से अलगाव दूर नहीं होता है।

समाज का एक दूसरे पर निर्भर एवं संघर्षरत क्षेत्रों (अर्थव्यवस्था, राजनीति, विधि, कला,

नैतिकता, धर्म, आदि) में विभाजित होना तथा समाज में आर्थिक क्षेत्र का अन्य सभी क्षेत्रों पर प्रभुत्व होना, मार्क्स के अनुसार, आत्म-अलगावित समाज की विशेषता है। यही कारण है कि विभिन्न मानवीय गतिविधियों का एक दूसरे से अलगाव समाप्त किये बिना समाज में अलगाव दूर करना असंभव है।

मार्क्सवादी अर्थ में, अर्थव्यवस्था के पुर्नगठन द्वारा अलगाव समाप्त नहीं किया जा सकता, चाहे यह परिवर्तन कितने ही क्रांतिकारी तरीक़े से लाया गया हो। व्यक्ति द्वारा अलगाव को झेलना तथा समाज में अलगाव होना, दोनों एक ही प्रक्रिया से संबंधित हैं। अत: दोनों में से केवल एक के अलगाव की समाप्ति से न तो दूसरे में अलगाव समाप्त किया जा सकता है और न इसे कम किया जा सकता है।

8.4.3 अलगाव की अवधारणा: विश्लेषण का आधार

अलगाव की अवधारणा मार्क्सवादी चिंतन में विश्लेषण की कुंजी है। मार्क्स के अनुसार अभी तक व्यक्ति सदैव स्व-अलगावित था। उत्पादन के बुर्जुआ संबंध वास्तव में उत्पादन की सामाजिक प्रक्रिया के अंतिम परस्पर विरोधी संबंध हैं जिनसे समाज में अलगाव उत्पन्न होता है। इसके साथ-साथ, बुर्जुआ समाज के भीतर विकसित हो रही उत्पादक शक्तियां ऐसी भौतिक दशाएं उत्पन्न करती हैं जो इस विरोध एवं अलगाव का समाधान कर देंगी। अत: एक तरह से यह सामाजिक संरचना मानवीय समाज के अंतिम अध्याय की "पूर्व ऐतिहासिक" अवस्था है। इस संरचना में बदलाव अलगाव को दूर करके ही बदलाव लाया जा सकता है। अलगाव की अवधारणा को भली भाँति समझने के लिए सोचिए और करिए 3 पूरा करें।

सोचिए और करिए 3

क्या आपकी मातृ भाषा में अलगाव के लिये कोई शब्द है? यदि हां, तो इस शब्द को बताइये व अपने रोज़मर्रा के जीवन से उदाहरण देकर इसे समझाइये।

8.5 सारांश

इस इकाई में हमने मानव समाज के ऐतिहासिक विकास के संदर्भ में कार्ल मार्क्स द्वारा दी गई वर्ग एवं वर्ग संघर्ष की अवधारणाओं का अध्ययन किया है। मार्क्स ने वर्ग को समाज के सदस्यों की वर्ग चेतना और उनके उत्पादन के साधनों के संबंध के संदर्भ में परिभाषित किया है। मार्क्स के शब्दों में "आज तक के समाज का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है।" इसका तात्पर्य यह है कि दास प्रथा के समय से ही सामाजिक असमानता और शोषण का युग प्रारंभ हो गया था। इस अवस्था में शोषण और असमानता बने रहते हैं। ऐसा समाज परस्पर विरोधी दो वर्गों में बंटा रहता है, जिसमें एक बुर्जुआ वर्ग और दूसरा सर्वहारा वर्ग कहलाता है। वर्ग संघर्ष और उत्पादन के तरीक़ों में परिवर्तन के कारण समाज के इतिहास में विभिन्न अवस्थायें परिवर्तन के दौर से गुज़री हैं, जिसमें एक दास प्रथा से सामंतवादी प्रथा और सामंतवादी से पूंजीवादी व्यवस्था तक परिवर्तन हुआ है। मार्क्स के अनुसार अंतिम सामाजिक क्रांति पूंजीवादी व्यवस्था को समाजवादी अवस्था में परिवर्तित कर देगी, जिसमें न तो सामाजिक असमानता होगी और न वर्ग तथा वर्ग संघर्ष होंगे। वर्गविहीन तथा राज्यविहीन समाज की संरचना होगी जिसमें अलगाव की स्थिति भी दूर हो जाएगी।

8.6 शब्दावली

बुर्जुआ वे लोग जिनके पास उत्पादन के साधन का स्वामित्व है।

	उदाहरण के लिये, सामन्तवादी युग में भूपति, पूंजीपति युग में उद्योगपति
सर्वहारा	वे लोग, जिनके पास अपनी श्रमशक्ति के अतिरिक्त किसी भी उत्पादन के साधन का स्वामित्व नहीं है। अतः सामन्तवादी समाज में सभी भूमिहीन किसान और कृषक मज़दूर तथा पूंजीवादी समाज में सभी औद्योगिक श्रमिक सर्वहारा की श्रेणी में आते हैं।
वर्ग	वे लोग, जिनके उत्पादन के साधनों से समान सम्बन्ध होते हैं, अर्थात् अपने समान हितों के प्रति जिनमें समान जागरूकता पाई जाती है। वे एक से वर्ग का निर्माण करते हैं।
वर्ग हित	किसी भी सामाजिक वर्ग के इतिहास, आकांक्षायें और मान्यताएँ, जिनमें उसके सदस्य समान रूप से विश्वास करते हैं
वर्ग चेतना	अन्य व्यक्तियों की निष्पक्ष (objective) वर्ग स्थिति की तुलना में अपनी वर्ग स्थिति के बारे में जागरूकता तथा समाज के परिवर्तन में इसकी ऐतिहासिक भूमिका के बारे में जागरूकता।
उत्पादन के साधन	उत्पादन के लिये आवश्यक सभी साधन। इसमें शामिल हैं, उदाहरण के लिये भूमि, कच्चा माल, फैक्ट्री, पूंजी तथा श्रम, आदि।
उत्पादन के सम्बन्ध	मार्क्स के अनुसार उत्पादन शक्तियां उत्पादन के सम्बन्धों की प्रकृति को निर्धारित करती हैं। वस्तुतः ये उत्पादन की प्रक्रिया में पाये जाने वाले सामाजिक सम्बन्ध अथवा आर्थिक भूमिकायें हैं, उदाहरण के लिये सामन्तवादी समाज में कृषक मज़दूरों तथा भूपति के मध्य संबंध एवं पूंजीपति समाज में पूंजीपति तथा औद्योगिक श्रमिक के मध्य संबंध।
उत्पादन प्रणाली	इसका तात्पर्य सामान्य आर्थिक संस्था से है, जिसे दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह वह विशिष्ट तरीका है, जिसके द्वारा लोग जीवनोपयोगी वस्तुओं का उत्पादन एवं वितरण करते हैं। उत्पादन की शक्ति और उत्पादन के संबंध दोनों मिलकर उत्पादन प्रणाली को परिभाषित करते हैं, उदाहरण के लिये पूंजीवादी उत्पादन के तरीके, सामन्तवादी उत्पादन के तरीके।
वर्ग संघर्ष	जब विपरीत एवं परस्पर विरोधी वर्ग हितों वाले वर्ग आपस में टकराते हैं ताकि वे अपने वर्ग हितों की रक्षा कर सकें, यह वर्ग संघर्ष कहलाता है।
पूंजीवाद	यह समाज की वह ऐतिहासिक अवस्था है, जिसमें उत्पादन के साधन मुख्यतया मशीनरी, पूंजी तथा श्रम होते हैं।
सामंतवाद	यह समाज की वह ऐतिहासिक अवस्था है, जिसमें उत्पादन के साधन भूमि एवं श्रम होते हैं।
क्रांति	वर्ग संघर्ष की परिपक्व दशाओं तथा वर्ग संघर्ष के अत्यधिक

बढ़ने के कारण समाज में लाया गया पूर्ण तथा आमूल परिवर्तन क्रांति कहलाता है।

अधोसंरचना मार्क्स के अनुसार किसी भी समाज की आधारशिला उस समाज की आर्थिक संरचना होती है अथवा दूसरे शब्दों में अधोसंरचना होती है। यह मूलत: उत्पादन प्रणाली से बनती है। अत: इसमें उत्पादन शक्तियां और उत्पादन संबंध सम्मलित होते हैं। इसी के ऊपर समाज की अधिसंरचना टिकी होती है।

अधिसंरचना यह समाज की अधोसंरचना पर टिकी होती है, इसके अन्तर्गत समाज की आर्थिक संस्थाओं के अतिरिक्त सभी सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक संस्थायें आती हैं।

8.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

कोज़र, लेविस ए. 1971,*मास्टर्स ऑफ़ सोशियॉलॉजिकल थॉट: आइडियाज़ इन हिस्टॉरिकल एण्ड सोशल कॉनटैक्स्ट,* हरकोर्ट ब्रेस जोवैनोविश्व: न्यूयार्क (पाठ 2, पृष्ठ 43-88)

बोटोमोर, टी.बी. 1975, *मार्क्सवादी समाजशास्त्र,* (अनुवादक: सदाशिव द्विवेदी) मैकमिलन कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड: नई दिल्ली

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) वे लोग, जिनके उत्पादन के साधनों के समान संबंध होते हैं अर्थात् अपने समान हितों के प्रति जिनमें समान जागरूकता पाई जाती है। वे एक वर्ग का निर्माण करते हैं।

ii) वर्ग निर्धारण के दो आधार हैं: अ) वस्तुपरक आधार तथा ब) स्वचेतनापरक आधार।

बोध प्रश्न 2

i) 1) आदिम साम्यवादी अवस्था 2) दास अवस्था
3) सामन्तवादी अवस्था 4) पूंजीवादी अवस्था
5) साम्यवाद

ii) अ) सही
ब) सही

बोध प्रश्न 3

i) इसमें एक ऐसा वर्ग विहीन समाज होगा जिसमें उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व नहीं होगा तथा राज्यविहीन समाज होगा।

ii) अ) ग़लत
ब) सही